सामाजिक आदर्श का प्रस्थापक तुलसी का रामराज्य

डॉ अमित कुमार

मानव समाज में समय-समय पर उत्थान -पतन का क्रम सदियों से निरंतर चला आ रहा है। मानव समाज के इस उत्थान -पतन के क्रम में सही राह दिखाने वाले कई चेतना सम्पन्न महापुरुष अपने आलोक बिंदुओं से समाज को सही दिशा में मोड़ने का पुण्य कार्य करते रहे हैं। अपने समय-समाज में गोस्वामी तुलसीदास ने भी ऐसा ही पुण्य कार्य राम काव्य का सृजन करके किया है। तुलसीदास द्वारा रचित राम काव्य एक विशाल जनसमूह एवं लोक के लिए वैश्विक स्तर पर प्रेरक और आचरण योग्य साबित हुआ और निरंतर हो रहा है। तुलसी के राम काव्य में एक ऐसा समाज है जो भले ही कुछ तथाकथित आलोचकों की नज़र में युटोपिया हो लेकिन उसमें तर्क और जीवन व्यवहार की जो आधारशिला दिखलाई देती है वह सही मायनों में किसी समाज की आदर्श स्थिति के लिए सदैव प्रेरक और ग्राह्य ही साबित होती रहेगी। तुलसीदास द्वारा रचित प्रत्येक रचना में इसे देखा जा सकता है रामचरितमानस तो उनकी प्रौढ़ रचना है जो मानव समाज के लिए दिशाबोधक चेतना रूपी अमूल्य मोती प्रदाता है।जब समाज में अराजकता, अव्यवस्था, भ्रष्टाचार पनपने लगे तो ऐसे में उसका पतन होना शुरू हो जाता है मानव समाज की इस उत्तरजीविता का आधार आदर्श और समरसता का संस्कार है जिसे तुलसी के राम राज्य में बखूबी देखा जा सकता है। वर्तमान सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के प्रति जो चुनौतियां सामने उभरती हैं उनको ध्यान में रखते हुए तुलसीदास की आदर्श राम-राज्य की परिकल्पना और उसके साकार रूप की प्रस्थापना अधिक प्रेरक ,दिशाबोधक और ग्राह्य प्रतीत होती है। तुलसी कृत रचनाओं से हमें पता चलता है कि उनके काव्य सृजन में तात्कालिक समय का यथार्थ भी बराबर उद्घाटित हुआ है।समाज की तत्कालीन दशा का वर्णन ही नहीं अपितु दिशा संधान भी उनके काव्य में हुआ है।मानव जाति के लिए कल्याणकारी पथ की प्रस्तावना उनकी वाणी का मुख्य बिंदु है जिसे उदाहरणों सहित प्रस्तुत शोध-पत्र में स्पष्ट करने का प्रयास रहेगा। आदर्श की स्थापना वही कर सकता है जो स्वयं आदर्शवादी हो। गोस्वामी तुलसीदास आदर्शवादी स्वर में विनम्रता से स्वयं के विषय में कहते हैं कि मैंने तो कोरे कागज लिखे हैं,मेरे पास कवि होने का कोई विवेक नहीं है।ऐसी स्वीकारोक्ति उनके सरल और अहंरहित चरित्र को रेखांकित करती है। ऐसे सरल और अहंरहित चरित्र के धनी होने के कारण भी वो महान कृतित्व कर पाए। राम काव्य के माध्यम से उन्होंने समाज की यथार्थ स्थिति का अवलोकन करते हुए अपनी रचनाओं में आदर्श व्यक्ति, परिवार और समाज की परिकल्पना करते हुए उसके साकार रूप की मंगलकामना प्रस्तुत की। सांस्कृतिक संक्रमण को पार करते हुए समरसता मूलक समाज की नींव रखता हुआ तुलसी का राम -राज्य मानव मात्र के लिए कल्याणकारी साबित होता है। वैयक्तिगत और सामाजिक आदर्श ही नहीं अपितु भौतिक जीवन की वास्तविकता पर आधारित एवं तर्क की कसौटी को साथ लेकर चलती तुलसी की राम कथा हमारे मानव समाज के लिए उत्तरोत्तर प्रभावशाली और अनुकरणीय बनी रहेगी। गोस्वामी तुलसीदास की लेखनी पर आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है "अपने दृष्टि विस्तार के कारण ही तुलसीदास जी उत्तरी भारत की समग्र जनता के हृदय

मंदिर में पूर्ण प्रेम प्रतिष्ठा के साथ विराज रहे हैं। भारतीय जनता का प्रतिनिधि कवि यदि किसी को कह सकते हैं तो इन्हीं महानुभाव को। और कवि जीवन का कोई एक पक्ष लेकर चले हैं -जैसे, वीरकाल के कवि उत्साह को, भक्तिकाल के दूसरे कवि प्रेम और ज्ञान को, अलंकार काल के कवि दांपत्य,प्रणय या श्रंगार को।पर इनकी वाणी की पहुॅंच मनुष्य के सारे भावों और व्यवहारों तक है।एक ओर तो वह व्यक्तिगत साधना के मार्ग में विरागपूर्ण शुद्ध भगवत् भक्ति का उपदेश करती है, दूसरी ओर लोकपक्ष में आकर पारिवारिक और सामाजिक कर्तव्यों का सौंदर्य दिखाकर मुग्ध करती है। व्यक्तिगत साधना के साथ ही साथ लोक धर्म की अत्यंत उज्ज्वल छटा उसमें वर्तमान है।"[1] यहा पर शुक्ल जी ने जिस प्रकार से सामाजिक कर्तव्यों और लोक धर्म की बात करते हुए गोस्वामी तुलसीदास को भारतीय जनता का प्रतिनिधि कवि कहा है उसे गोस्वामी तुलसीदास के काव्य से बराबर प्रमाणित किया जा सकता है । भारतीय जन-मन की आशाओं -आकांक्षाओं के मंगल का स्वर तुलसी रचित राम राज्य की परिकल्पना-वर्णन में हम देख पाते हैं। व्यक्ति के पारिवारिक एवं सामाजिक दायित्वों के विवेकपूर्ण उचित निर्वहन पर बात करते हुए गोस्वामी तुलसीदास जी नेतृत्व और कर्तव्य के समन्वय को वर्णित करते हुए कहते हैं -

"मुखिया मुखु सो चाहिऐ खान-पान कहुॅं एक।

पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित बिबेक ।"[2]

गोस्वामी तुलसीदास ने 'कवितावली' में अयोध्याकांड के प्रारंभ में ही श्रीराम द्वारा वनवास गमन के प्रस्थान का वर्णन करते हुए जीवन में तप-संयम और त्याग की परिपाटी के प्रचलन को बढ़ावा देते हुए श्रीराम द्वारा राजसी मोह को त्यागकर वनगमन को इस प्रकार उद्घाटित किया है जहां एक पथिक की भांति श्री रामचंद्र सब कुछ त्याग कर वन के लिए निकल पड़ते हैं -

" कीर के कागर ज्यों नृप चीर,विभूषण उप्पम अंगनि पाई।

औद तजी मगवास के रुख ज्यों,पंथ के साथ ज्यों लोग-लोगाई।।

संग सुवंधु,पुनीत प्रिया,मनो धर्मु क्रिया धरि देह सुहाई।

राजिवलोचन रामु चले तजि बाप को राजु बटाउ कीं नाईं।।[3]

तुलसीदास ने प्रस्तुत उदाहरण के माध्यम से यह आदर्श प्रस्थापित किया है कि महलों में ऐशो आराम करने का अधिकार रखने वाले श्री राम जन सामान्य के लिए कोरा आदर्श नहीं बल्कि ग्राह्य प्रेरणा के रूप में सामने आता है। तुलसीदास जी ने श्री राम कथा के माध्यम से जीवन में जो आदर्श और मंगल प्रस्तुत करने का प्रयास किया है वह उनके समय के साथ साथ हमारे वर्तमान को भेदता हुआ, भविष्योन्मुखी भी है दूसरे शब्दों में शाश्वत है क्योंकि उनके चिन्तन-मनन में लोक की व्यापक समझ और चेतना मौजूद रही।यही कारण है कि आज भी लोक जीवन की परिधि उनके द्वारा लिखी गई रामकथा से प्रभावित व प्रेरित होती है। उन्होंने रामकथा के माध्यम से जो आदर्श और प्रेरक बिंदु साहित्य में रच दिये वो हमारे वर्तमान में भी संपूर्ण लोकजीवन में ध्वनित होते हैं। रामलीलाओं के माध्यम से भी,राम कथाओं के पाठ के

माध्यम से भी और शोध और व संकलन व पठन पाठन की दृष्टि से भी। संपूर्ण रामकथा आदर्श और जीवन की व्यावहारिक समझ के तालमेल को हमारे सामने उकेरती है, उदाहरण का प्रत्यक्ष प्रमाण प्रस्तुत होने से रामकथा रोचक, विश्वसनीय और संपूर्ण लोकजीवन में आस्था और प्रेरणा का विषय बन जाती है।राष्ट्र के चरित्र निर्माण में सामाजिक आदर्श की परिपाटी का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। गोस्वामी तुलसीदास ने श्री रामचरितमानस में चरित्र एवं सामाजिक आदर्श की इसी प्रकार की अपेक्षित परिपाटी का निर्वहन कराया है। हमारे वर्तमान समाज में छीजते संबंधों की नींव को हरा भरा करने के लिए रिश्तों की मर्यादा और पारस्परिक स्नेह तालमेल को बढ़ावा देना अनिवार्य है। गोस्वामी जी की निम्नांकित पंक्ति ऐसे ही अपेक्षित स्नेह -समर्पण को सामने रखती हैं -

"जहँ लगि नाथ नेह अरू नाते।पिय बिनु तियहि तरनिहु ते ताते।।

तनु धनु धामु धरनि पुर राजु ।पति बिहीन सब सोक समाजु।।

भोग रोग सम भूषण भारू।जम जात ना सरिस संसारू।।

प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं।मो कहुं सुखद कतहुं कछु नाहीं।।[4]

यहां तुलसीदास ने दिखाया है कि कैसे अपने पति बिना पत्नी कहती है कि पति के बिना सब कुछ दुख देने वाला बन जाता है,शरीर,धन,घर, पृथ्वी,नगर राज्य यह सब स्त्री के लिए उसके पति के बिना शोक का समाज बन जाते हैं,जीवन के सुख भोग रोग बन जाते हैं, गहने भार हो जाते हैं।यह संसार यम की यातना जैसा और कुछ भी सुखदाई नहीं रह जाता है। हमारे वर्तमान में पारिवारिक संबंधों में स्नेह -सौहार्द को बनाए रखने के लिए यह पंक्तियां संबल प्रदान करती हैं जिन्हें पति-पत्नी के परस्पर स्नेह -समर्पण के रूप में भी देखा जा सकता है। गोस्वामी तुलसीदास ने व्यक्ति की चारित्रिक विशेषताओं के माध्यम से सामाजिक सुधार की बात को हमारे सम्मुख रखा है। तुलसीदास के समय के सामंती समाज में प्रचलित वर्ण व्यवस्था के साथ ही किस प्रकार सामाजिक स्नेह सौहार्द कायम रहे,इस पर उन्होंने अपना चिंतन प्रकट किया है।एक स्थान पर वह लिखते हैं कि -

"लोक बेद सब भंतिहि नीचा।जासु छाँह छुइ लेइअ सींचा।।

तेहि भरि अंक राम लघु भ्राता।मिलत पुलक परिपूरित गाथा।।[5]

यहां सामाजिक रूप से भिन्न समझे जाने वाले निषाद से श्री राम के छोटे भाई भरत सस्नेह गले लगकर मिल रहे हैं और सभी पुलकित और खुश दिखलाई दे रहे हैं। हमारे वर्तमान समय में इस प्रकार का राम कथा वर्णन बहुत ही प्रासंगिक प्रतीत होता है जिसके माध्यम से मानवता एवं समरसता का संदेश प्रस्तुत होता है। गोस्वामी तुलसीदास विरचित रामकथा का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यही प्रतीत होता है कि प्रस्तुत काव्य के माध्यम से एक आदर्श को बराबर प्रस्थापित किया गया है।आज हम सब उन्नत एवं आत्मनिर्भर भारत की बात करते हैं तो उसमें व्यक्ति के चरित्र निर्माण पर विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता पड़ती है। श्रीरामचरितमानस में एक स्थान पर गोस्वामी जी ने खर-दूषण के विध्वंस के उपरांत शूर्पणखा

द्वारा रावण को जो नसीहत दी गई है वह एक योग्य शासक के लिए आवश्यक रूप से ग्राह्य प्रतीत होती है जिसमें चरित्र संवलन भी शामिल है -

"करसि पान सोवसि दिनु राति। सुधि नहिं तव सिर पर आराती।।

राजनीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा ।।

बिद्या बिनु बिबेक उपजाएँ। श्रमफल पढ़ें किएँ अरू पाएँ।।

संग तें जती कुमंत्र ते राजा। मान ते ग्यान पान तें लाजा।।"[6]

यहां रावण को समझाती हुई शूर्पणखा कहती है कि शत्रु सिर पर खड़ा है और तुम मदिरा पीकर पड़े हो। शूर्पणखा के माध्यम से गोस्वामी जी ने आगे कहा है कि नीति के बिना राजा और धर्म बिना कमाया धन, भगवत् समर्पण बिना कर्म और बिना विवेक की विद्या महत्व नहीं रख पाती ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार विषयासक्त संन्यासी,बुरी सलाह युक्त राजा मान से ज्ञान और मदिरा से लज्जा अपना महत्व खो देते हैं। गोस्वामी जी द्वारा दिए गए यह नीति वचन सामाजिक आदर्श हेतु वर्तमान में भी अपना विशेष महत्व रखते हैं। सामाजिक आदर्श की बात करते हुए गोस्वामी जी ने श्रीरामचरितमानस के सुंदरकांड में एक स्थल पर कहा है कि जहां मंत्री,वैद्य और गुरु भय एवं आशा आदि अन्यान्य कारणों से औचित्यपूर्ण बात न कहकर मात्र खुश कर देने वाली, सुनने में अच्छी और प्रिय लगने वाली बात कहने लग जाएं तो ऐसी स्थिति में क्रमशः राज्य,शरीर और धर्म की हानि एवं शीघ्र ही नाश हो जाता है -

"सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।

राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगिहीं नास।।[7]

यहां यह संकेत स्वत: मिल जाता है कि नितिगत परिपाटी का अनुसरण राज्य के सुफल संचालन के लिए बहुत महत्व रखता है।राजा से प्रजा तक अधिकार और कर्तव्यों का उचित एवं समन्वित निर्वहन इसके लिए अपेक्षित होता है।जैसा कि मैंने लेख के प्रारंभ में चर्चा की थी कि तुलसी के राम-राज्य की परिकल्पना को एक युतोपिया बताकर यथार्थ से उसकी स्थिति को अलगाने की बात कुछ तथाकथित आलोचक समय-समय पर करते रहे हैं ।इस संदर्भ में यह सोदाहरण प्रस्तुत करना आवश्यक हो जाता है कि गोस्वामी तुलसीदास ने अपने समय-समाज का जितना सूक्ष्म और मार्मिक वर्णन किया है वह बहुत कम रचनाकार कर पाते हैं ।जीवन के कटु यथार्थ,विवशता एवं अभाव का वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदास ने अपने समय के व्यापक सच को उद्घाटित किया है। सबसे बड़ी बात यह है कि वे सच में लोक-मंगल के साधक कवि हैं जिनमें विराट लोक संवेदन और सामाजिक नैतिकता के चेतना बिंदु विद्यमान हैं। अपने समय की अराजक स्थिति का उल्लेख करते हुए गोस्वामी जी कवितावली में लिखते हैं -

"खेती न किसान को, भिखारी को न भीख, बलि

बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी ।

जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोच बस,

कहं एक एकन सो 'कहां जाई का करी ?

बेदहूं पुरान कही,लोकहूं बिलोकिअत।

साॅंकरे सबै पै राम ! रावरें कृपा करी।

दारिद-दसानन दबाई दुनी,दीन बंधु!

दुरित-दहन देखि तुलसी दहा करी।।"[8]

यहां गोस्वामी जी ने किसान, व्यापारी, भिखारी सबकी बुरी स्थिति का उल्लेख करते हुए कहा है कि असहाय लोगों को रावण रूपी बुराई ने घेर लिया है ऐसे में सब पर श्री राम कृपा करें। प्रस्तुत उदाहरण यह साबित करता है कि गोस्वामी जी ने लोकजीवन की तकलीफ़ व कठिनाईयों को बहुत गहरे तक समझा और अनुभूत किया था।ऐसी जीवन विपरीत स्थितियों में उन्होंने संकट मुक्त राम राज्य की परिकल्पना कर लोक-मंगल का स्वर अपनी वाणी में निरंतर प्रवहमान रखा जिससे जन-सामान्य का हौंसला इस प्रकार की संकटापन्न स्थिति में में भी मजबूत होता रहा।

समाहार रूप में कहा जाए तो गोस्वामी तुलसीदास द्वारा अपनी रचनाओं में जिस प्रकार से रामराज्य को परिकल्पित किया गया है उसमें सामाजिक आदर्श बराबर अनुस्यूत है।वैयकतिगत चरित्र -निर्मलता से लेकर सामान्य सामाजिक शिष्टाचार की परिपाटी को गोस्वामी जी ने एक आदर्श स्थिति के रूप में वर्णित एवं उद्घाटित किया जो सदैव हमारे मानव समाज के लिए कल्याणकारी साबित होती रहेगी। तुलसीदास द्वारा वर्णित राम-राम सामाजिक आदर्श को प्रतिपादित एवं प्रस्थापित करता हुआ हमें भविष्योन्मुखी दृष्टि प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1.आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, श्रुति बुक्स, गाजियाबाद, संस्करण 2012, पृष्ठ 75

2. अयोध्या काण्ड, श्रीरामचरितमानस, गीता प्रेस गोरखपुर, संस्करण संवत् 2070,दो सौ सत्रहवां पुनर्मुद्रण

पद 315पृष्ठ 608

3. अयोध्या काण्ड, कवितावली, गीता प्रेस गोरखपुर, अष्टम संस्करण संवत् 2007, पृष्ठ 20

4. अयोध्या काण्ड, श्रीरामचरितमानस , गीता प्रेस गोरखपुर , संस्करण संवत् 2070, दो सौ सत्रहवां पुनर्मुद्रण,

64/2-3 पृष्ठ 397

5. अयोध्या काण्ड, श्रीरामचरितमानस, गीता प्रेस गोरखपुर, संस्करण संवत् 2070, दो सौ सत्रहवां, पुनर्मुद्रण 193/2 पृष्ठ 504

6. अरण्य काण्ड ,श्रीरामचरितमानस, गीता प्रेस गोरखपुर, संस्करण संवत् 2070, दो सौ सत्रहवां पुनर्मुद्रण, 20ख/4-5 पृष्ठ 649

7. लंका काण्ड , श्रीरामचरितमानस, गीता प्रेस गोरखपुर, संस्करण संवत् 2070, दो सौ सत्रहवां पुनर्मुद्रण, 37 पृष्ठ 748

8. उत्तर काण्ड ,कवितावली, गीता प्रेस गोरखपुर , अष्टम संस्करण संवत् 2007, पृष्ठ 163

डॉ अमित कुमार

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,

श्यामलाल महाविद्यालय 'सांध्य',

दिल्ली विश्वविद्यालय